THE TIMES OF INDIA

Date: 25-08-26

Spendonomics

That India could've world's second-largest big-spending population by 2036 is good news on more than one front

TOI Editorials

In just 10 years, India could be home to world's second-largest population of "affluent" consumers, per a new NielsenIQ-World Data Lab report. US would still be first by an enormous margin, but India, on its current growth trajectory, will edge past China. That's great news. But, some may ask, how will this come about, given China's GDP is about 5x India's, in nominal terms. India's lower cost of living - relatively cheaper goods and services - would be key to this miracle. While Nielsen-WDL considers people spending over $90 a day in US as affluent, in India, a daily expenditure of €1,800, or *54,000 a month, amounts to the same in purchasing power parity terms-this is the correct measure to compare economic data between countries. And the projection is that some 10.8cr Indians will be in a position to spend at least that much regularly. But only 10.3cr Chinese would have daily spending power equivalent to $90 in yuan, by 2036.

What this really means is that a consumption boom lies ahead.Flights, hotels, cars, appliances, eating out-sales will move into a higher gear all around. And because private consumption is the biggest driver of India's GDP, it is possible that economic growth will average more than the 7-odd percent it's done in recent years. The Nielsen-WDL report isn't the only one bullish on India. In 2024, a Goldman Sachs analysis predicted 10cr affluent Indians by 2027. Of course, its measure of "affluence" appears different at first-annual income of around $10,000 in nominal exchange terms. But earning 9.5L or spending 6.6L per year aren't such disparate measures. After all, affluent people also save. Goldman's confidence arose from the fact that this class had been growing at 12-13% per annum since 2019, and had already touched 6cr in 2023. So, Nielsen-WDL's 10.8cr projection actually seems like a very conservative estimate of India's future affluent class.

Time will tell how fast India becomes affluent. But the groundwork for it can't be left to time. Since we're talking about a consumption boom, domestic manufacturers must start thinking about premium demand. Otherwise, MNCs will walk away with it. Besides, the Nielsen- WDL report estimates the global affluent class growing by 37cr in the next 10 years. That's an enormous new market for Indian brands to tap. China became the world's factory, but Japanese, American and German brands still have stronger recall. Indian

industry should also aim to acquire cachet. Capex is needed for that, but investments in R&D are even more important.

THE HINDU

Date: 25-08-26

Perfect host

India was successful as a host of badminton World Championships

Editorial

The 2026 BWF World Championships in New Delhi marked the rise of France as an on-court force and of India as a capable host. Alex Lanier's triumph in singles, and Thom Gicquel and Delphine Delrue's in mixed doubles, were the first golds in France's history. It was just over three months ago that the European nation finished a worthy runner-up to China in the Thomas Cup, the de facto World Cup in badminton. The Worlds success has established France as a serious contender in a sport otherwise dominated by Asian countries. In fact, Lanier is just the third non-Asian this century-after Spain's Carolina Marin and Denmark's Viktor Axelsen - to win the singles gold at the World Championships. The 21-year-old did that at a spruced-up Indira Gandhi Indoor Stadium, which was in the dock earlier in January when pigeons and monkeys intruded into the arena during the India Open. The massive facelift ensured that the marquee event's return to India after 17 years would be long remembered. An Se-Young will also go back with happy memories after reclaiming the women's singles crown from threetime titlist Akane Yamaguchi. The victory extended the 24-year-old reigning Olympic champion's stellar 2026, during which she has won an Uber Cup gold medal, and the individual and team tro- phies at the Badminton Asia Championships.

For India, the competition was the 12th straight edition where it secured at least one medal, with Gayatri Gopichand and Treesa Jolly bagging a bronze in women's doubles. The performance is the latest in a series of good outcomes for Indian badminton after an ordinary 2025, where Satwiksairaj Rankireddy and Chirag Shetty's World Championships doubles bronze was the best result. This year, Lakshya Sen reached the All England Open final, and Ayush Shetty at the Badminton Asia Championships. P.V. Sindhu's victory at the Japan Open Super 750 last month was only her second Tour title in the last four years, and there were also triumphs for Satwiksairaj and Chirag at Singapore Open Super 750, and for Devika Sihag, Tanvi Sharma and Ashmita Chaliha at the Super 300 level. Yet, the feeling is unmistakable that India should have done better at a home World Championships, with Lakshya's second-round defeat to the unheralded American teenager Garret Tan the most disappointing. There is no questioning the 25-year- old's capability; he is a World Championships bronze medallist, a two-time All England finalist and finished an agonising fourth at the Paris 2024 Olympics. But no Indian men's singles player has won an elite BWF Super 1000-level title since K. Srikanth in 2017. A swift end to this drought is es- sential for the overall health of the sport.

दैनिक भास्कर

Date: 25-08-26

देश के ये 8.7 करोड़ जन-जी युवा आज क्या कर रहे हैं?

संपादकीय

नीति आयोग की ताजा री-इमेजिनिंग स्किलिंग फॉर विकसित भारत रिपोर्ट में बताया गया है कि 15-29 युवा वर्ग के 8.7 करोड़ जेन - जी न तो कोई शिक्षा या ट्रेनिंग ले रहे हैं, न ही किसी रोजगार में हैं। देश में कुल 40 करोड़ जन-जी हैं। इन 8.7 करोड़ युवाओं को 'कुछ न करने वालों' की श्रेणी में माना जाना चाहिए। सरकार का तर्क है कि ये घर के कामकाज या व्यवसाय में हाथ बंटाते हैं। लेकिन अगर इन्हें आसानी से अवसर उपलब्ध होता तो इनमें से ज्यादातर अपनी छूटी पढ़ाई, व्यावसायिक ट्रेनिंग या किसी कामकाज को अपनाते । तभी तो नीति आयोग ने सरकार से किफायती या फ्री - वोकेशनल ट्रेनिंग की वकालत की है। यह डेमोग्राफिक डिविडेंड का काल है। देश को इस युवा शक्ति का भरपूर लाभ मिलना चाहिए था। ऐसे युवाओं को सरकार 'नीट' (नॉट इन एजुकेशन, एम्प्लॉयमेंट, ट्रेनिंग) वर्ग में रखती है। देश में 'नीट' वर्ग में जितने युवा हैं, उतनी तो जर्मनी, ब्रिटेन या फ्रांस की आबादी भी नहीं है। और जर्मनी की जीडीपी भारत से आज भी ज्यादा है। अगर उन्हें शिक्षा और ट्रेनिंग के बाद बेहतर जीवन की गारंटी होती तो शायद ही किशोर वय के लड़के-लड़कियां परिवार वालों के काम में हाथ बंटाने, दुकान पर बैठने या खेत में काम करने पर मजबूर होते । शिक्षा और ट्रेनिंग को आजीविका से जोड़ना ही निदान है, लेकिन क्या एमएसएमई सेक्टर इसमें सक्षम है भी ?

Date: 25-08-26

एजुकेशन महंगी होती जाएगी तो हम अपना भविष्य कैसे गढ़ेंगे?

डॉ. अरुणा शर्मा, (इस्पात मंत्रालय की पूर्व सचिव)

गरीबी के ट्रैप पर तो काफी बहस होती है। लेकिन क्या हम एक नए एजुकेशन ट्रैप में भी प्रवेश नहीं कर रहे हैं? भारत की 65 प्रतिशत आबादी युवा है। ऐसे में शासन की सर्वोच्च प्राथमिकता इस युवा आबादी को देश की ताकत में बदलना होनी चाहिए। लेकिन क्या हमारी नीतियां, शिक्षा-व्यवस्था और रोजगार सृजन की प्रणाली युवाओं की क्षमता को अधिकतम रूप से विकसित करने की दिशा में काम कर रही हैं? चुनौती यह है कि आने वाले दशक के लिए भारत के पास मौजूद वर्कफोर्स की क्षमता किफायती और अच्छी शिक्षा हासिल करने के अवसरों में हो रही गिरावट के कारण धीरे-धीरे क्षीण हो रही है।

गरीब और मध्यमवर्गीय परिवारों के लिए बेहतर जीवन-स्तर का सपना शिक्षा और उपयुक्त कौशल हासिल करने से जुड़ा है। साइनबोर्ड और पोस्टर बनाने वाला पेंटर अब कंप्यूटर डिजाइनिंग की ओर बढ़ गया है और फ्लेक्स बनाने लगा है। हमें लगातार बदलाव करते हुए शारीरिक श्रम से अधिक ऑटोमेटेड मैन्युफैक्चरिंग की ओर बढ़ना होगा। अपनी मजबूत शिक्षा-व्यवस्था के दम पर हमने दुनिया को बेहतरीन प्रतिभाएं दी हैं। लेकिन क्या हमने उस बढ़त को कायम रखा है? या फिर नए प्रयोग करने की होड़ में हमने अपनी मौजूदा संस्थागत ताकत को ही कमजोर कर दिया है? हमारी पिछली पीढ़ी के लिए सस्ती और सुलभ सार्वजनिक शिक्षण संस्थाएं उपलब्ध थीं, जबकि आज की युवा पीढ़ी को फीस और कोचिंग पर भारी रकम खर्च करनी पड़ती है और अंततः चयन तथा परीक्षा प्रक्रियाओं की व्यवस्था के बार-बार विफल होने के जाल में फंसना पड़ता है।

युवा ऐसी व्यवस्था के दुष्चक्र में फंस रहे हैं, जिसमें गुणवत्ता सुनिश्चित करने और शिक्षा को सुलभ बनाने के लिए जिम्मेदार एजेंसियों की अक्षमता और जवाबदेही के अभाव के कारण उनके सामने पेशेवर विकल्प चुनने के अवसर भी घट रहे हैं। यही 'एजुकेशन ट्रैप' है- एक ऐसा दुष्चक्र, जिससे निकलना मुश्किल होता जाता है।

पुराने और प्रतिष्ठित व्यावसायिक संस्थानों में प्रवेश के लिए चयन प्रक्रियाएं पात्रता तय करने वाली परीक्षाओं और प्रतियोगी प्रवेश परीक्षाओं के संचालन में विफल होती रही हैं। इससे छात्रों को अपने सपनों को पूरा करने का अवसर देने की इन व्यवस्थाओं की क्षमता पर गंभीर सवाल खड़े होते हैं। भारत लंबे समय से अपनी अत्यधिक कुशल, शिक्षित और प्रशिक्षित वर्कफोर्स को दुनिया के विभिन्न हिस्सों में भेजने के लिए जाना जाता रहा है। इन लोगों ने अपनी मेहनत और क्षमता के बल पर अपने संस्थानों और देश का गौरव बढ़ाया है। भारत में भी उन्होंने सरकारी, सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में योगदान दिया और उन्हें नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया। इनमें से अधिकांश ने सार्वजनिक शिक्षा व्यवस्था के तहत स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाई की थी। करदाताओं के धन की प्राथमिकताओं में से एक ऐसी शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित करना भी है, जो सर्वोत्तम गुणवत्ता वाली और सस्ती हो । बढ़ती आबादी और बेहतरीन व्यावसायिक शिक्षा के लिए बढ़ती प्रतिस्पर्धा के बीच एक बड़ा सवाल यह भी है कि क्या हम आज भी सस्ती शिक्षा उपलब्ध करा पा रहे हैं?

2002 में 86वें संविधान संशोधन के जरिए अनुच्छेद 21-ए जोड़कर शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाया गया और इसके लिए 1 अप्रैल 2010 को कानून लागू हुआ। इसके साथ सार्वजनिक शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित करने की जरूरत पर जोर बढ़ा और एनरोलमेंट्स का स्तर 98 प्रतिशत तक पहुंचा, जिससे लाखों बच्चे

शिक्षा के दायरे में आए। लेकिन 'लर्निंग डेफिसिट' यानी सीखने की कमी बनी रही। उसके बाद इस व्यवस्था को मजबूत करने के बजाय हमारा फोक्स निजी स्कूलों में बढ़ते दाखिलों की ओर मुड़ गया, जिससे शिक्षा दिन-ब-दिन महंगी होती चली गई।

नीति आयोग के आंकड़ों के अनुसार पिछले एक दशक में 94,000 सरकारी स्कूल या तो बंद हुए या उनका विलय कर दिया गया, जिससे वंचित तबकों के लिए शिक्षा तक पहुंच का सवाल गंभीर हो गया है। देश के दूर-दराज के इलाकों तक शिक्षा की पहुंच बढ़ाने के प्रयास पीछे छूटते जा रहे हैं। सरकारी स्कूलों में दाखिले में भी 6 प्रतिशत की गिरावट आई है और स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या बढ़ी है। इस तरह शिक्षा जो सामाजिक और आर्थिक खाई को पाटने का सबसे बड़ा माध्यम होनी चाहिए वही इस खाई को और चौड़ा करती दिखाई दे रही है।

दैनिक जागरण

Date: 25-08-26

एथनाल नीति पर फिर से विचार हो

प्रमोद भार्गव, (लेखक राजनीतिक विश्लेषक हैं)

केंद्र सरकार ने 10 साल में पहली बार चीनी आयात करने का फैसला लिया है। चीनी अब डालर देकर विदेश से मंगाई जाएगी। जबकि 2022 तक ईयू और यूएस को तय कोटा निर्यात के बाद यह प्रतिबंध लगना पड़ता था कि अब और चीनी निर्यात नहीं की जाए, जिससे घरेलू मांग की पूर्ति आसान बनी रहे और चीनी महंगी भी न हो । अब यह स्थिति निर्मित हो गई है। कि घर-घर में इस्तेमाल की जाने वाली चीनी का भंडार पिछले साल की तुलना में 20 प्रतिशत कम हो गया है। इस कमी का प्रमुख कारण गन्ने का उपयोग एथनाल बनाने में किया जाना माना जा रहा है। भारत में पहले से ही अनाज से शराब बनाई जा रही है। खाद्य उपज से पेट्रोल और शराब का बड़ी मात्रा में निर्माण नीति-नियंताओं की अदूरदर्शिता प्रकट करती है।

बीते दो माह के भीतर चीनी की कीमतें उछलकर 40 प्रतिशत तक बढ़ गई हैं। आगे रक्षाबंधन, गणेश महोत्सव और कृष्ण जन्माष्टमी जैसे बड़े त्योहार हैं, जिनमें मिठाई और प्रसाद वितरण के लिए चीनी की बड़ी मांग बनी रहती हैं। इसके तत्काल बाद नवदुर्गा, विजयदशमी और दीपावली जैसे बड़े पर्व हैं, जिनमें चीनी की सर्वाधिक

खपत होती है। यदि समय पर चीनी आयात नहीं हो पाती हैं तो चीनी के दाम आसमान छूने लग जाएंगे। हालांकि सरकार यह जता रही हैं कि पेट्रोल में एथनाल की मात्रा बढ़ाने से चीनी महंगी नहीं हुई है, बल्कि खराब मौसम के चलते गन्ने की फसल की कम पैदावार के कारण देश में चीनी का उत्पादन कम हुआ है। सरकार एक अन्य कारण अंतरराष्ट्रीय बाजार में चीनी के दामों में वृद्धि बता रही है। सरकार ई-20 एथनाल पेट्रोल के उत्पादन पर अंकुश लगाने को तैयार नहीं है। यही कारण है कि सरकार ने ई- 10 यानी 10 प्रतिशत एथनाल मिश्रित पेट्रोल बनाने के सुझावों को सिरे से खारिज कर दिया है।

देश में एथनाल उत्पादन की क्षमता तेजी से बढ़कर 2000 करोड़ लीटर प्रतिवर्ष से ज्यादा हो गई है, जबकि पेट्रोल वाहनों में एथनाल मिला पेट्रोल उपयोग करने से वाहन का माइलेज प्रभावित हो रहा है। बावजूद इसके एथनाल निर्माण के नए संयंत्रों का निर्माण हो रहा है। इस सेक्टर को बैंकों ने एक लाख करोड़ रुपये का कर्ज दिया हुआ है। अब सरकार की दुविधा यह है कि यदि पेट्रोल में ब्लेंडिंग घटाई गई तो हजारों करोड़ के बैंक ऋण और देसी-विदेशी निवेश डूबने का संकट बढ़ जाएगा। ब्लेंडिंग उस प्रक्रिया को कहते हैं, जिसके तहत एक तय मात्रा में बायो फ्यूल यानी ई-20 या ई-10 प्रतिशत पेट्रोल में एथनाल मिलाया जाता है। हालांकि यह जीवाश्म ईंधन जलवायु परिवर्तन पर अंकुश लगाने के लिए पर्यावरण के अनुकूल है। इस कारण तमाम देश जैव ईंधन का उत्पादन बढ़ाने में लगे हैं।

केअर एज रेटिंग्स की रिपोर्ट के अनुसार चालू वित्त वर्ष के अंत तक एथनाल उत्पादन क्षमता 400 करोड़ लीटर और बढ़ जाएगी। अर्थात कुल उत्पादन क्षमता करीब 2,400 करोड़ लीटर तक पहुंच जाने की उम्मीद है। जबकि 2014 में एथनाल का उत्पादन 421 करोड़ लीटर प्रतिवर्ष होता था, जो अब चार गुना अधिक हो गया है। चालू वित्त वर्ष के दौरान पेट्रोल ब्लेंडिंग के लिए ई-20 पेट्रोल के लिए 1,200 करोड़ लीटर एथनाल की जरूरत पड़ेगी। यही नहीं, उद्योगों, फार्मा कंपनियों और रसायन क्षेत्रों में भी 350 लीटर एथनाल की मांग बनी हुई है। 2025 से देश में ई- 20 पेट्रोल की बिक्री हो रही हैं।

लगता है पिछले कुछ समय से अमेरिका- ईरान, रूस - यूक्रेन और इजरायल के युद्ध के चलते केंद्र सरकार ने एथनाल मिश्रित पेट्रोल को और बढ़ावा देने का मन बनाया है। इधर एथनाल के नए संयंत्र लगाए जाने के कारण उद्योग जगत की मांग है कि ई-30 या उससे अधिक एथनाल मिश्रित पेट्रोल की बिक्री देशभर में शुरू की जाए। फिलहाल देश में गन्ना, मक्का और अन्य अनाजों से बने एथनाल के निर्यात पर प्रतिबंध लगाया जाए, क्योंकि यदि खाद्य सामग्री से बना एथनाल निर्यात होने लगा तो देश में अनाज की आपूर्ति में कमी तो आएगी ही, अनाज महंगा भी हो जाएगा।

अनाज, फल-सब्जी जैसी वस्तुएं आदमी के जिंदा रहने की बुनियादी शर्त हैं, पर आधुनिक जीवनशैली के लिए जरूरी बना दिए गए औद्योगिक उत्पादन और भौतिक उपकरणों को ऊर्जा उपलब्ध कराने के लिए वैकल्पिक स्रोतों में फसलों का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल दुनिया भर में हो रहा है। यदि जैविक ईंधन के लिए अनाज के प्रयोग को खुली छूट दे दी जाती है तो भारत में भूख का संकट गहरा सकता है। ऐसे में वाहनों के उत्पादन को बढ़ाना और

बैंकों के कर्ज के जरिये उनकी बिक्री आसान करना भूख की स्थिति को और गंभीर बनाएगी। इस सिलसिले में ब्रिटेन की स्वयंसेवी संस्था आक्सफेम ने दुनिया में बढ़ रहे खाद्यान्न संकट के सिलसिले में चेतावनी दी है कि यदि अनाज से शराब और एथनाल बनाना बंद नहीं किया तो 2030 तक खाद्यान्न की मांग 70 प्रतिशत तक बढ़ सकती है और अनाज की कीमतें भी दोगुनी हो सकती हैं। ऐसे में एथनाल नीति पर फिर से विचार होना चाहिए।

जनसत्ता

Date: 25-08-26

वंचना की राह

संपादकीय

किसी देश की सबसे बड़ी पूंजी उसकी युवा पीढ़ी की आंखों में पलते सपने होते हैं। मगर जब देश की कुल आबादी में एक बड़ी संख्या में युवा पढ़ाई, रोजगार और प्रशिक्षण - तीनों से बाहर खड़े हों, तो यह केवल एक आंकड़ा नहीं, बल्कि सरकार के उन दावों को आईना दिखाता सवाल है, जिसे अक्सर अर्थव्यवस्था की चमकती तस्वीर से ढकने की कोशिश की जाती है। गौरतलब है कि नीति आयोग हाल ही में अपनी एक रिपोर्ट में बताया है कि देश में पंद्रह से उनतीस वर्ष की आयु के करीब आठ करोड़ सत्तर लाख युवा ऐसे हैं, जो न तो कोई पढ़ाई कर रहे हैं, न रोजगार में हैं और न ही किसी तरह का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। अगर इतनी बड़ी संख्या में युवा एक तरह से खाली बैठे हैं, तो आखिर किस आधार पर सरकार की ओर से यह दावा किया है कि युवा आबादी ही देश की ताकत है और वही भविष्य की दिशा तय करेगी। विचित्र है कि एक ओर रोजगार सृजन और करोड़ों युवाओं को अवसर मुहैया कराने के दावे किए जाते हैं, वहीं इतनी बड़ी युवा आबादी शिक्षा से लेकर रोजगार तक के अवसरों के दायरे से बाहर है।

सरकारें घोषणाओं से उम्मीदें जगा सकती हैं, मगर युवाओं को ऐसे कौशल और रोजगार के वास्तविक अवसरों की जरूरत है, ताकि वे अपना भविष्य थोड़ा बेहतर बना सकें । उन्हें योजनाओं की लंबी सूची नहीं, सही समय पर उचित मार्गदर्शन चाहिए। इसके बरक्स हुआ यही है कि रोजगार के अवसर लगातार सिकुड़ते गए हैं। आज हालत यह है कि युवाओं को न तो अपनी पढ़ाई जारी रखने की स्थिति दिख रही है और न ही वे अपने बूते या सरकारी मदद से रोजी- रोटी का कोई जरिया तैयार कर सकने में सक्षम हैं। एक सवाल यह भी है कि जब मुद्रा ऋण से लेकर अन्य कई तरह की योजनाएं सरकार की ओर से चलाने का दावा किया जा रहा है, तो उनका लाभ युवाओं तक क्यों नहीं पहुंच रहा ? सरकार को इस मुश्किल सवाल का सामना करना चाहिए, क्योंकि जिस देश

में करोड़ों हाथ काम की तलाश में हों, वहां केवल विकास के दावे पर्याप्त नहीं होते। सरकार करोड़ों नौकरियों के अलावा युवाओं को विभिन्न ऋण योजनाओं से मिलने वाली सहूलियतों के बारे में बताती रहती है, लेकिन नीति आयोग के आंकड़े अलग ही तस्वीर दिखा रहे हैं।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 25-08-26

अमेरिका में भारतवंशियों की हार के मायने

फ्रैंक एफ इस्लाम, (अमेरिकी उद्यमी व समाजसेवी)

अमेरिकी राज्य मिशिगन में इस महीने की शुरुआत में हुए प्राइमरी चुनाव ने पूरे देश का ध्यान अपनी ओर खींचा। इसका मुख्य कारण था, सीनेट सीट पर नामांकन हासिल करने के लिए डेमोक्रेट प्रत्याशियों में हुआ कड़ा मुकाबला। इसमें एक तरफ अब्दुल अल-सईद थे, जिन्हें पार्टी के प्रगतिशील गुट का समर्थन हासिल था और जो अंततः उम्मीदवार चुने गए, और दूसरी तरफ थीं हेली स्टीवंस, डेमोक्रेटिक पार्टी का एक बड़ा धड़ा उनका साथ दे रहा था।

हालांकि, भारतवंशियों के लिए मिशिगन से सबसे बड़ी खबर थानेदार की हार थी, जो राज्य के 13वें जिले का दो बार प्रतिनिधित्व करने वाले सांसद हैं। उनकी हार इसलिए भी चौंकाती है, क्योंकि कांग्रेस के वर्तमान सदस्य शायद ही प्राइमरी चुनाव हारते हैं। वैसे, इस मामले में सिर्फ थानेदार अपवाद नहीं रहे हैं। कांग्रेस के 12 मौजूदा सदस्य प्राइमरी हार चुके हैं, जिनमें से सात डेमोक्रेट हैं। प्राइमरी चुनाव में विफल रहने वालों में डेमोक्रेट राजा कृष्णमूर्ति भी हैं, जिन्हें करीब पांच महीने पहले इलिनोइस में हार मिली। वह सीनेटर डिक डरबिन के पद छोड़ने की घोषणा के बाद उनकी सीट के लिए अपनी किस्मत आजमा रहे थे।

कृष्णमूर्ति और थानेदार की पराजय को भारतीय- अमेरिकी एक बड़ा झटका मान रहे हैं, क्योंकि बीते कई वर्षों में पहली बार कांग्रेस में उनकी मौजूदगी कम होती दिख रही है। इस समुदाय के छह सदस्य फिलहाल कांग्रेस में हैं और वे सभी डेमोक्रेट हैं। कृष्णमूर्ति और थानेदार के अलावा 'समोसा कॉक्स' के अन्य सदस्य कैलिफोर्निया के प्रतिनिधि अमी बेरा और रो खन्ना, वाशिंगटन की प्रमिला जयपाल और वर्जीनिया के प्रतिनिधि सुहास सुब्रमण्यम हैं। अगले साल जनवरी में कृष्णमूर्ति और थानेदार के कांग्रेस छोड़ने के साथ यह समूह महज चार सदस्यों का हो सकता है। एक संभावित जीत एरिजोना में मिल सकती है, जहां चिकित्सक और पूर्व विधायक अमिश शाह ने

डेमोक्रेट प्रत्याशी बनने का नामांकन जीत लिया है। इस सीट के लिए शाह का यह दूसरा चुनाव है। नवंबर 2024 के चुनाव में वह बहु कम अंतर से हार गए थे।

एरिजोना का जो भी नतीजा हो, पर मौजूदा हालात डेढ़ दशक पहले की तुलना में बहुत अलग हैं। नवंबर 2012 में एमी बेरा के चुने जाने से पहले, जो कांग्रेस में सबसे लंबे समय तक सदस्य रहने वाले भारतवंशी अमेरिकी हैं, सिर्फ दो भारतीय-अमेरिकी कांग्रेस के लिए चुने गए थे। साल 2005 से 2008 तक लुइसियाना के पहले जिले का प्रतिनिधित्व करने वाले बॉबी जिंदल, जो बाद में लुइसियाना के गवर्नर बने और दूसरे, उनसे कई दशक पहले सन् 1957-1963 तक के लिए कैलिफोर्नियाई प्रतिनिधि दलीप सिंह सौंध सौंध का निर्वाचन इसलिए भी खास था, क्योंकि उनका चयन 1965 के 'इमिग्रेशन ऐंड नेशनैलिटी ऐक्ट' से बरसों पहले हुआ था। गौरतलब है, इस कानून ने ही अमेरिका में भारतीयों के बड़े पैमाने पर बसने का रास्ता खोला था।

बेरा के कांग्रेस में आने के 12 वर्षों के भीतर भारतीय- अमेरिकी सांसदों की संख्या एक समय बढ़कर छह हो गई थी। लगभग 55 लाख संख्या (अमेरिका की कुल आबादी का करीब 1.6 प्रतिशत) वाला यह समुदाय ऐसे अल्पसंख्यक समूह के रूप में उभरा है, जिसका राजनीतिक प्रभाव उसकी आबादी के हिसाब से बहुत ज्यादा है। यह प्रभाव कांग्रेस से कहीं आगे तक गया। कमला हैरिस, जो अफ्रीकी-अमेरिकी एवं भारतवंशी, दोनों हैं, न सिर्फ उप-राष्ट्रपति बनीं, बल्कि डेमोक्रेट प्रत्याशी के तौर पर राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव लड़ने वाली पहली भारतीय-अमेरिकी भी हैं।

इस पृष्ठभूमि के आधार पर यही कहना सही होगा कि मौजूदा झटकों को चुनावी नतीजों में आया एक अस्थायी बदलाव अधिक माना जाए। पिछले दशक में भारतीय मूल के अमेरिकियों की सियासी भागीदारी में जबर्दस्त वृद्धि हुई और अब सरकार के लगभग हर स्तर पर इस समुदाय के पास उम्मीदवारों और चुने हुए प्रतिनिधियों की एक मजबूत टीम मौजूद है। 'इंडियन अमेरिकन इम्पैक्ट' संगठन की मानें, तो देश भर में 250 से ज्यादा भारतवंशी अमेरिकी विभिन्न पदों पर निर्वाचित हैं।

इस समुदाय की बढ़ती सियायी हैसियत की सबसे साफ झलक पिछले वर्ष न्यूयॉर्क में दिखी, जहां जोहरान ममदानी ने देश के सबसे चर्चित चुनावों में से एक में जीत हासिल की और शहर के पहले भारतीय- अमेरिकी मेयर बनने का गौरव हासिल किया। उनकी जीत इसलिए अहम थी, क्योंकि न्यूयॉर्क न सिर्फ एक बड़ा अमेरिकी शहर है, बल्कि इससे यह भी साबित हुआ कि भारतीय- अमेरिकी उम्मीदवार एक बड़ा गठबंधन बना सकता है। और महत्वपूर्ण पदों पर जीत सकता है।

अब एक और बड़े शहर का चुनाव भारतीय- अमेरिकी उम्मीदवार को राष्ट्रीय स्तर पर सुर्ख़ियों में ला रहा है। इस नवंबर में, लॉस एंजिल्स सिटी कौंसिल की सदस्य नित्या रमन मेयर करेन बास को चुनौती दे रही हैं। इससे अमेरिका के इस दूसरे सबसे बड़े शहर में वोटरों को एक उल्लेखनीय विकल्प मिलने जा रहा है।

इन चुनावों से यह संकेत मिल रहा है कि बेशक कुछ समय के लिए कांग्रेस में भारतीय-अमेरिकियों की संख्या कम हो जाए, पर इस समुदाय का राजनीतिक प्रभाव महज संसद में उनके प्रतिनिधियों की संख्या से नहीं नापा जा सकता। कैपिटल हिल (संसद) के बाहर उनका दायरा कहीं अधिक बड़ा और विविध है। हालांकि, बढ़ती हुई राजनीतिक मौजूदगी को बनाए रखने और बढ़ाने के लिए आमजन के मुद्दों से लगातार जुड़े रहना भी जरूरी है। ट्रंप शासन का एक सबक यही है कि दशकों के संघर्ष से हासिल राजनीतिक और नागरिक अधिकारों को हल्के में नहीं लिया जा सकता । चूंकि उनको कमजोर किया जा सकता है या वे छीने जा सकते हैं, इसलिए लगातार सतर्क रहना और इन अधिकारों के लिए आवाज उठाने के लिए भारतवंशी प्रतिनिधियों को तैयार रहना जरूरी है।

टेक्सास के फ्रिस्को शहर में भारतीय-अमेरिकियों के खिलाफ हो रहा विरोध, जो कुछ हद तक इमिग्रेशन एवं एच-1बी वीजा के विरोध से उपजा है, इस बात की याद दिलाता है कि इस समुदाय की बढ़ती पहचान उसे सियासी निशाना भी बना सकती है। इसलिए एक चुनावी दौर की नाकामियों से बड़ी तस्वीर को नजरंदाज नहीं करना चाहिए। संसद में प्रतिनिधित्व घटता-बढ़ता रहता है, लेकिन इस समुदाय का राजनीतिक प्रभाव लगातार बढ़ रहा है। अब चुनौती सिर्फ यह गिनना नहीं है कि कितने भारतवंशी अमेरिकी पदों पर हैं, बल्कि यह तय करना है कि इस समुदाय की आवाज सुनी जाती रहे और इसकी राजनीतिक उपलब्धियां बरकरार रहें।